International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 713-715

पर्यावरण निम्नीकरण और उसके प्रभाव

हेमन्त कुमार सिंह
एम.ए., नेट, भूगोल विभाग, इ.वि.वि., इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

कहते हैं कि प्रत्येक मनुष्य अपने भविष्य को बेहतर बनाने का निरन्तर प्रयास करता है। शायद व्यक्तिगत विकास के स्तर पर तो यह सही है परन्तु पर्यावरण के स्तर पर मनुष्य की वर्तमान गतिविधियाँ उसकी असंवेदनशीलता की ओर ही इशारा करती है। हमारे आस–पास के वातावरण की वर्तमान बढ़ती समस्याएँ जैसे मृदा के वास्तविक गुणों का ह्रास, वायु संघटन में अवांछित परिवर्तन, जल में प्रदूषकों के स्तर का तेजी से बढ़ना, जैवविविधता का तीव्र ह्रास, पर्यावरण के साथ–साथ मानव अस्तित्व पर भी भविष्य के संकट की तरह है। इन समस्याओं के मूल में कुछ प्राकृतिक कारकों को छोड़कर मानव गतिविधियाँ हैं। विकास की अन्धी दौड़ में हम शायद अपनी पर्यावरण नैतिकता एवं मूल्यों को पीछे छोड़ चुके है। प्रकृति के संसाधनों का अपनी संवृद्धि के लिए इस प्रकार से दोहन किया जा रहा है कि उनका मूल स्वरूप ही परिवर्तित हो रहा है। जिसमें अन्ततः मृदा अनुवर्तता, वैश्विक ऊष्मन एवं जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि, पेयजल समस्या, जल तनाव जैसी समस्याओं का स्वरूप धारण कर लिया है। वर्तमान में उत्पन्न होने वाली उपरोक्त समस्याएँ भविष्य में और विकराल रूप ले सकती हैं। अब यह समझने का प्रयास करते हैं कि निम्नीकरण से क्या तात्पर्य है तथा आखिर ये पर्यावरण के विभिन्न घटकों पर किस प्रकार प्रभाव डालता है एवं उसके क्या अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक परिणाम हो सकते हैं।

निम्नीकरण से तात्पर्य पर्यावरण के विभिन्न घटकों यथा मृदा, वायु, जल तथा जैवविविधता के वास्तविक गुणों एवं विशेषताओं में होने वाले अवांछनीय परिवर्तन से है। प्रकृति में सामान्य परिस्थितियों में निम्नीकरण एवं निर्माणकारी प्रक्रियाएँ एक चक्रीय रूप में घटित होती हैं एवं इनमें संतुलन की स्थिति बनी रहती है। परन्तु वर्तमान में इस तकनीकी प्रधान एवं वैश्वीकृत युग में मानवीय गतिविधियों के कारण प्राकृतिक संसाधनों के अतिदोहन से यह चक्र असंतुलित हो रहा है। भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन, औद्योगिकीकरण एवं नगरीकरण की तीव्र दर, उपभोक्तावादी संस्कृति ने निम्नीकरण की दर को तीव्र कर दिया है जिसका परिणाम पर्यावरण असंतुलन के रूप में सामने आ रहा है। विशेषकर 20 वीं शताब्दी के मध्य के बाद से पर्यावरणीय समस्याओं नें वैश्विक स्वरूप धारण कर लिया है। यही कारण है कि 1987 में पर्यावरण और विकास पर Brundt Land कमीशन द्वारा सतत विकास की संकल्पना प्रस्तुत करते हुए विकास की ऐसी प्रक्रिया पर जोर दिया जो वर्तमान की आवश्यकताओं से समझौता किए बिना भविष्य की जरूरतों की पूर्ति भी कर सके।

मृदा प्राकृतिक पारितंत्र का एक महत्वपूर्ण घटक है साथ ही एक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन भी है। वनस्पति एवं कृषि का विकास मृदा की गुणवत्ता पर ही निर्भर करता है। परन्तु वर्तमान समय में मृदा निम्नीकरण एक महत्वपूर्ण समस्या बनकर उभरी है। जिसका प्रमुख कारण मृदा अपरदन की दर में वृद्धि, मृदा संसाधन का अतिदोहन, मृदा प्रदूषण तथा मृदा लवणीकरण में वृद्धि है। मृदा के गुणों में हास भविष्य में खाद्यान्न संकट के साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय समस्यायें भी उत्पन्न कर सकता है। मानव द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति, जैसे जनसंख्या वृद्धि के कारण आवास एवं आर्थिक विकास हेतु वन भूमियों का अतिक्रमण हो रहा है जिसके लिए बड़े पैमाने पर वृक्षों का कटाव किया जा रहा है। चूकि वनस्पतियाँ मृदा को स्थायित्व प्रदान कर मृदा अपरदन की दर को नियंत्रित करती हैं पर वनोन्मूलन के कारण वायु एवं जल जैसे अपरदन के कारकों द्वारा मृदा अपरदन अर्थात मृदा की ऊपरी परत के कटाव की दर में वृद्धि हो रही है। जिस कारण मृदा के अनुपजाऊ होने से बंजर भूमि के क्षेत्रफल में विस्तार हो रहा है और वृहद पैमाने पर मरूस्थलीकरण की समस्या उत्पन्न हुई है। मरूस्थलीकरण के दीर्घकालिक प्रभाव से मृदा की शुष्कता एवं लवणता में वृद्धि से मृदा की उत्पादकता का ह्रास होता है। साथ ही जल अभाव के कारण जलीय सूखा की स्थिति भी उत्पन्न होती है जो जैवविविधता के विकास हेतु प्रतिकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न करती है।

वर्तमान समय में शुष्क भूमियों का तीव्र विस्तार एवं निम्नीकरण हो रहा है। शुष्क भूमियाँ पृथ्वी के स्थलीय भाग के लगभग 40–42% क्षेत्र में विस्तृत है तथा ऐसा अनुमानित है कि शुष्क भूमियों का लगभग 10–20% भाग निम्नीकृत हो चुका है। लगभग 6 से 12 मिलियन वर्ग किलोमीटर क्षेत्र मरूस्थलीकरण से प्रभावित हैं। अफ्रीका के सहारा मरूस्थल का तीव्र गति से विस्तार अर्धशुष्क साहेल क्षेत्र में हो रहा है। 'रिसर्च इन्स्टीट्यूट आफ डेवलपमेन्ट के एक अध्ययन के अनुसार 1900 ई. के बाद से सहारा मरूस्थल का लगभग 250 कि.मी. दक्षिण की ओर विस्तार हो चुका हैं तथा साहेल क्षेत्र के लगभग 6000 वर्ग कि.मी. क्षेत्रों में वृद्धि के कारण प्रवसन की समस्या भी उत्पन्न हुई है। यूनाइटेड नेशन कन्वेंशन के अनुसार लगभग 6 मिलियन साहेल निवासियों के उत्तरी अमेरिका और यूरोप में 1997 से 2020 के मध्य प्रवास के अनुमान है। इसी प्रकार की समस्यायें गोबी मरूस्थल के वाह्य विस्तार से देखी जा सकती हैं।

हाल ही में 'सेन्टर फार साइन्स एन्ड एन्वायरमेन्ट' और 'डाउन टू अर्थ' मैगजीन द्वारा जारी 'स्टेट आफ इण्डियाज एन्वायनमेंन्ट 2017' के अनुसार भारत की कुल भूमि का लगभग 30% भाग मरूस्थलीकरण से प्रभावित है। भारत के 29 राज्यो में से 26 राज्य मरूस्थलीकरण से प्रभावित है। रिपोर्ट ने भारत में मरूस्थलीकरण के लिए उत्तरदायी कारको में जलीय अपरदन, वन अपरोपण, वायु अपरदन, मृदा लवणता में वृद्धि, मानव निर्मित आवासीय प्रतिरूपों को प्रमुख माना है।

मरूस्थलीकरण के अलावा जलीय अपरदन में वृद्धि के कारण

जलीय स्रोतों में अवसादों के जमाव से बाढ़ की सम्भावना भी बढ़ी है साथ–साथ मृदा की कठोर परतों के ऊपरी सतह पर आने के कारण अन्तः स्पंदन की दर में कमी से भूमिगत जलस्तर में भी कमी हो रही है। जिसके परिणाम स्वरूप पारिस्थितिक असंतुलन निरन्तर बढ़ रहा है। इसके अतिरिक्त तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या की खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कृषि उत्पादकता में वृद्धि के लिए उर्वरकों के अनियंत्रित उपयोग एवं सिंचाई के साधनों जैसे नहर सिंचाई के अत्यधिक उपयोग के कारण भी मृदा की गुणवत्ता में ह्रास हो रहा है। भारत में हरित क्रान्ति के दौरान उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से मृदा में पोषक तत्वों का ह्रास तथा नहर एवं नलकूप सिंचाई के कारण उत्तर पश्चिम राज्यों विशेषकर पंजाब एवं हरियाणा में मृदा लवणीकरण की समस्या में गम्भीर रूप ले लिया है। वर्तमान में नगरीकरण एवं औद्योगीकरण की तीव्र वृद्धि ने अपशिष्टों के अप्रभावशाली प्रबन्धन के कारण मृदा प्रदूषण की समस्या उत्पन्न कर दी है। वर्तमान सूचना तकनीकी युग में इलेक्ट्रानिक सामानों के बढ़ते उपयोग ने ई–अपशिष्ट के निस्तारण की समस्या उत्पन्न कर दी है जिससे मृदा प्रदूषण ने और जटिल रूप ले लिया है जो भविष्य में पारिस्थितिकीय उत्पादकता एवं मानवीय अस्तित्व के लिए संकट उत्पन्न कर सकता है।

मृदा के साथ–साथ वायु भी पर्यावरण का महत्वपूर्ण घटक है। जैविक अस्तित्व के लिए वायु सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक है। चाहे वह वनस्पतियों में प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया हो या मानव की श्वसन, उपापचयी प्रक्रियाएँ हों, वायु द्वारा ही इन प्रक्रियाओं के लिए गैसों की आपूर्ति होती है। परन्तु विकास की प्रक्रिया में संसाधनों के अतिदोहन से वायु की गुणवत्ता के साथ संघटन में भी प्रतिकूल प्रभाव से वायु प्रदूषण से सम्बन्धित समस्याएँ वर्तमान में वैश्विक समस्याएँ बनकर उभरी है। औद्योगीकरण और नगरीकरण की तीव्र विकास दर ने वायुमण्डल में ग्रीनहाउस गैसों (कार्बन डाई आक्साइड, सल्फर डाई आक्साइड आदि) में तीव्र वृद्धि की है। जिस कारण पृथ्वी के तापमान में आवंछित वृद्धि हो रही है। 'जलवायु परिवर्तन पर अन्तर्सरकारी पैनल' की 5वीं रिपोर्ट के अनुसार पृथ्वी के औसत तापमान में 2100 ई॰ तक 1861–1880 के स्तर से 2^0C से ज्यादा वृद्धि की सम्भावना है। साथ ही रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान उत्सर्जन दर के हिसाब से हमारा कार्बन बजट 30 वर्षों में समाप्त हो जायेगा। वायु निम्नीकरण से जलवायु के वैश्विक प्रतिरूपों जैसे तापमान, वर्षा, आर्द्रता में परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं जो क्षेत्रीय एवं वैश्विक रूप से पारिस्थितिक तन्त्र पर प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न कर रहा है। तापमान में वृद्धि के कारण हिमचादरों में खिसकाव एवं हिमगलन के कारण समुद्री जलस्तर में निरन्तर वृद्धि हो रही है। आई.पी.सी.सी. की रिपोर्ट के अनुसार 2100 ई॰ तक कम उत्सर्जन परिदृश्य में समुद्री जलस्तर में 0.26–0.55 मीटर की वृद्धि होगी जबकि उच्च उत्सर्जन परिदृश्य में यह वृद्धि 0.52–0.98 मीटर की होगी। साथ ही इस रिपोर्ट में यह भी सम्भावना व्यक्त की गई है कि पूरे विश्व में ग्लेशियर सिकुड़ें है एवं ग्रीनलैण्ड तथा अंटार्कटिक हिमचादरों का काफी भाग पिछले 2 दशकों में खो चुका है।

इसके अतिरिक्त जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षण प्रतिरूप में परिवर्तन से निम्न अक्षांशीय प्रदेशों में वर्षा की मात्रा, तीव्रता एवं आवृत्ति में वृद्धि से बाढ़ की समस्या तथा मध्य अक्षांशीय क्षेत्रों में भूमध्यसागर के आस–पास के भागों में शीत ऋतु की अवधि कम होने से सूखे की समस्या उत्पन्न हो सकती है। साथ ही उच्च अक्षांशीय क्षेत्रों में हिमगलन से बाढ़, तटीय एवं द्वीपीय जलमग्नता की समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। तापमान में वृद्धि से प्राकृतिक आपदाओं जैसे तटीय क्षेत्रों में चक्रवात, सूनामी, भूकम्प की तीव्रता एवं बारम्बारता बढ़ने की संभावना है।

वायु प्रदूषण के कारण समताप मंडल की ओजोन परत का क्षय तीव्र गति से हो रहा है। जिससे पृथ्वी की सतह पर पराबैगनी किरणों की तीव्रता में वृद्धि से पृथ्वी के तापमान में वृद्धि एवं वनस्पतियों की प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है जो पारिस्थितिकीय उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा है। मानव समुदाय पर भी इसके प्रत्यक्ष प्रतिकूल प्रभाव दिखाई पड़ते हैं। आनुवांशिक संरचना में परिवर्तन एवं त्वचा केंसर से सम्बन्धित समस्याएँ मानव के लिए हानिकारक हैं। अन्तिम रूप से यह जैवविधता के ह्रास के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक है। इसके अतिरिक्त वायु प्रदूषण से प्रदूषकों के वर्षा जल के साथ अभिक्रिया से अम्लीय वर्षण की समस्या भी उत्पन्न हो रही है। जिससे मृदा की अम्लीयता में वृद्धि से में वृद्धि हो रही है साथ ही जल की अम्लीयता में वृद्धि से जलप्रदूषण से सम्बन्धित समस्याएँ उत्पन्न हो रही है। इमारतों में भी रासायनिक अपक्षय की दर में वृद्धि होती है जो सांस्कृतिक विरासतों के लिए भी हानिकारक है। इस प्रकार वायु निम्नीकरण के कारण जहाँ बाढ़ एवं सूखा से सम्बन्धित समस्याएँ उत्पन्न हो रही है वहीं जैविक समुदाय एवं पर्यावरण के अन्य घटकों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। जिसमें दीर्घकाल में पर्यावरणीय, आर्थिक एवं सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। जैसा कि वर्तमान में दिल्ली जैसे शहरों में देखा जा रहा है, जहाँ वायु प्रदूषण के उच्च स्तर के कारण पर्यावरणीय आपात की स्थिति उत्पन्न हो गई है। आई.पी.सी.सी. की हाल ही की रिपोर्ट के अनुसार अगर वर्तमान तापन दर कायम रही तो हिमालय ग्लेशियर वर्तमान के 50 लाख किमी.^{2} से सिकुड़कर वर्ष 2030 तक 1 लाख किमी.^{2} तक रह जायेगी। जिसके प्रभाव अल्पकाल में नदियों में बाढ़ तथा दीर्घकाल में जल अभाव के कारण जलीय सूखा की स्थिति उत्पन्न होने की सम्भावना है। इसके अतिरिक्त वर्षण की मात्रा में कमी एवं मृदा नमी तनाव द्वारा मध्य भारत में साल के पेड़ों द्वारा साँगवान बहुल वनों के प्रतिस्थापन का खतरा बढ़ा गया है। मानसून प्रवृत्ति में परिवर्तन से भी भारत की जैव विविधता एवं जलीय उपलब्धता पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

औद्योगिक विकास के कारण औद्योगिक अपशिष्टों एवं नगरीय अपशिष्टों का अवैज्ञानिक रूप से नदियों एवं जलीय स्त्रोतों में निष्कासन हो रहा है जिससे पर्यावरण के महत्वपूर्ण घटक जल की गुणवत्ता में कमी आ रही है। इससे जलीय प्रदूषण में वृद्धि व जैविक समुदाय के अस्तित्व के लिए आवश्यक एवं महत्वपूर्ण के जल की उपलब्धता सीमित होती जा रही है। कृषि, औद्योगिक एवं घरेलू अपशिष्ट तथा तेल अधिप्लाव वर्तमान समय पर जलीय प्रदूषण के सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्त्रोत है। जलीय प्रदूषण में वृद्धि के साथ स्वच्छ जल की कमी से जल तनाव की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। प्रदूषण पदार्थों के आधिक्य के कारण जल घुली ऑक्सीजन की मात्रा घट जाती है जिसमें कुछ संवेदी जीवों जैसे प्लवक, मोलस्क एवं कुछ मछलियों की मृत्यु हो जाती है। इसके अतिरिक्त पेयजल में पारा, सीसा, कैडमियम जैसी भारी धातुएँ मानव स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है। भारत के हरित क्रांति के क्षेत्रों में अत्यधिक उर्वरकों के प्रयोग के कारण भूमिगत जल के प्रदूषण की समस्या देखने की मिली है। EPA–2010 राष्ट्रीय झील आंकलन के अनुसार भारत की 20% झीलों में उच्च मात्रा में नाइट्रोजन और फास्फोरस प्रदूषक पाये गये हैं। इससे जलीय पारितंत्र पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है और सुपोषण, जैव आवर्धन, प्रवाल विरंजन की प्रक्रिया तेज हो जाती है। पारायुक्त जल से प्रभावित मछलियों के सेवन से 1956 में जापान में मिनिमाता बीमारी से अनेक लोगों की मौत हो गयी थी। इसके अतिरिक्त जल प्रदूषण

का प्रत्यक्ष प्रभाव खाद्य उत्पादन जैसे मत्स्य उत्पादन, झींगा उत्पादन शैवाल कृषि आदि पर भी पड़ता है अतः इससे आर्थिक प्रक्रियाएँ धीमी हो जाती हैं।

पर्यावरण निम्नीकरण के कारण आर्थिक, स्वास्थ्यजनक एवं सामाजिक प्रभाव भी देखने को मिलते है। पर्यावरण निम्नीकरण का सर्वाधिक वृहद प्रभाव जैव विविधता पर पड़ता है। मानव द्वारा भूमि उपयोग प्रतिरूप में परिवर्तन, औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के कारण वृक्षों का तीव्र दर से कटाव किया जा रहा है। चूंकि वनस्पति पारिस्थितिक तंत्र का प्राथमिक उत्पादक होने के साथ–साथ विभिन्न प्रजातियों का निकेत भी होता है इसलिये वनों के विनाश के कारण जैविक प्रजातियों के आवास नष्ट हो रहे है, और मानव–पशु संघर्ष में वृद्धि के साथ–साथ विभिन्न प्रजातियाँ विलुप्त भी हो रही है। IUCN की रेड डाटा लिस्ट के अनुसार लगभग 4529 प्रजातियाँ (स्तनधारी, पक्षी, उभयचर) विलुप्ति के कगार पर है। IUCN के अनुसार संसाधनों का अतिदोहन, आवास विनाश, जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण इस विलुप्ति के प्रमुख कारण है। वर्तमान समय में तकनीकी विकास के दौर में इलेक्ट्रानिक्स उत्पादों कम्प्यूटर, मोबाइल आदि के बढ़ते उपयोग ने इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट की समस्या उत्पन्न की है। समुचित निपटान तकनीक के अभाव में इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट पर्यावरणीय निम्नीकरण का एक महत्वपूर्ण कारण बन गया है, जो मृदा प्रदूषण, जल प्रदूषण में वृद्धि कर मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न करता है। इसके अतिरिक्त परमाणु बिजली संयंत्रों से निकले रेडियोधर्मी अपशिष्ट भी पर्यावरण के लिये हानिकारक है।

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि पर्यावरण निम्नीकरण के तात्कालिक एवं दीर्घकालिक रूप में हानिकारक प्रभाव हो सकते हैं। जिस कारण बाढ़ एवं सूखा जैसी प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि के साथ–साथ भविष्य में खाद्यान्न संकट, मानव अस्तित्व एवं जैवविविधता के लिये भी संकट उत्पन्न हो सकता हैं इसलिये धारणीय विकास की संकल्पना को आधार बनाकर विकास एवं पर्यावरण में संतुलन स्थापित किये जाने की आवश्यकता है। इसके लिए पर्यावरणीय प्रबंधन को बढ़ावा देकर और पर्यावरणीय शिक्षा के माध्यम से लोगों को जागरूक किये जाने की आवश्यकता है। ताकि मानव समुदाय को पर्यावरण के विभिन्न घटकों के मध्य अंतः क्रियाशीलता का ज्ञान हो सके। साथ ही इन घटकों पर मानवीय क्रियाकलापों के कारण पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों एवं उससे मानव अस्तित्व के लिये संभावित खतरों के बारे में जागरूकता फैलाई जा सके। इसके अतिरिक्त क्षेत्रीय तथा स्थानीय स्तर पर पर्यावरण के विभिन्न घटकों के संरक्षण को भी बढ़ावा दिये जाने की आवश्यकता है। वैश्विक स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के माध्यम से पर्यावरण निम्नीकरण की समस्या का समाधान करने का प्रयास किया जाना चाहिये क्योंकि पर्यावरणीय ह्रास के क्षेत्रीय कारणों का वैश्विक प्रभाव देखने को मिलता हैं। उदाहरणस्वरूप ब्रिटेन और जर्मनी के औद्योगीकरण का प्रभाव नार्वे और स्वीडन में अम्लीय वर्षण के रूप में दिखाई दे रहा है।

मृदा के संरक्षण के लिये मृदा अपरदन तथा मृदा प्रदूषण की दर को नियंत्रित किए जाने की आवश्यकता है। इसके लिये वृक्षारोपण में वृद्धि करने के साथ–साथ स्थानीय स्तर पर जैविक विधियों के अंतर्गत कृषि योग्य भूमि का प्रबंधन करने की आवश्यकता है। ढाल वाले क्षेत्रों में समोच्चरेखीय कृषि, अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में शेल्टर कृषि एवं मैदानी क्षेत्रों में सामान्य पट्टीदार कृषि को बढ़ावा दिया जाना चाहिये। शुष्क कृषि क्षेत्रों के प्रबंधन एवं स्थानांतरण शील कृषि पर रोक के माध्यम से भी संरक्षण किया जा सकता है।

वायु निम्नीकरण के प्रबंधन के लिये नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों से अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों को यथासंभव प्रतिस्थापित किये जाने की आवश्यकता है, साथ ही औद्योगिक क्षेत्रों के कार्बन उत्सर्जन दर को नियंत्रित करने के लिए उच्च तकनीकों के प्रयोग की आवश्यकता है। अपशिष्ट प्रबंधन तकनीकों को बेहतर कर औंर उनके उपयोग को बढ़ावा, जैसे अपशिष्ट से विद्युत उत्पादन करने की आवश्यकता है जो तकनीकी हस्तांतरण के लिये अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से पूरा हो सकता है।

महात्मा गाँधी के अनुसार प्रकृति के पास मनुष्य की आवश्यकताओं के लिये सब कुछ है, परन्तु लालच के लिये नहीं। इसलिये संसाधन के अतिदोहन एवं उपभोक्तावादी संस्कृति पर नियंत्रण की आवश्यकता है विकास की अंधी दौड़ के स्थान पर विकास एवं पर्यावरण को साथ लेकर चलने से ही धारणीय विकास संभव है, अन्यथा भविष्य में मानव अस्तित्व पर ही संकट उत्पन्न हो सकता है।

संदर्भ

1. तिवारी, आर0 सी0, 2008, भारत का भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ0 602 से 623.
2. भरुचा, इराक, 2006, पर्यावरण अध्ययन, ओरियंट लॉगमैन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
3. सिंह, बी0 एन0 एवं यादव, ए0के0 2007, मानव एवं आर्थिक भूगोलण
4. सिंह, बी0 एन0, 2007, मानव भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबादण
5. सिंह, सविन्द्र, 1991, पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, पृ0 272 से 307.